भगवत् कृपा

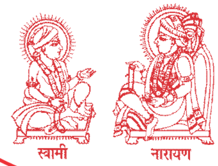

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष 21 अंक : 5 | मंगलवार, 26.5.98 | वार्षिक चंदा : 50.00

निमंत्रण

आईये....
हम सभी के प्राणपुरुष–दिव्यविभूति
ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज का 81वां प्राकट्य दिन
स्थानिक रूप से दिल्ली–अनिर्देश मंदिर में
दिनांक 14 जून '98, रविवार सायं 6.30 से 9.00 मनायें
व
साथ ही एक महिने के जपयज्ञ की पूर्णाहुति करके
उनके प्रति अपनी भक्ति अदा करें......

गुणातीत समाज के सर्जक व चैतन्यशिल्पी
ब्र.स्व. प.पू. काकाजी महाराज के 81वें प्राकट्य दिन के अवसर पर.....

जीवन एक वरदान है। मानव जीवन-प्रभु द्वारा हमें दी गई सर्वोत्कृष्ट भेंट है।
अनादि काल से, मनुष्य लगातार हर संभव प्रयत्न करता आया है कि
उसका जीवन आरामदायक बने,
धरती पर उसकी जीवन यात्रा सुखद और समाज से उसके संबंध मधुर बनें,
परिस्थितियाँ अनुकूल बनें, उसके दिन खुशनुमा और रातें शांतिमय बनें,
सप्ताह आश्चर्यजनक ढंग से सुखद गुजरे

और
महीने अर्थपूर्ण व सालों साल खुशहाल-समृद्धिदेय बनें।
परन्तु, इन उद्देश्यों की पूर्ति करने के प्रयास में वह अपने मूल उद्देश्य से भटक गया।
भौतिक सफलताएं निश्चित प्राप्त करते हुए भी, उसे आत्मिक सुख, शांति व आनंद प्राप्त करने में दयनीय असफलता ही मिली।
हृदय रोग और रक्तचाप से पीड़ित अनगिनत लोगों के किस्से,
कलह और तलाक से परिवारों का टूटना, शराब के नशे से बढ़ती दुर्घटनाएं,
जोरु-जमीन-जायदाद के लिए होती लड़ाईयाँ और धर्म के नाम पर होते युद्ध–
ये सभी भटकी हुई मानवजाति की दिशाहीन विचारधारा की भरपूर गवाही देते हैं।
लेकिन, प्रभु निर्दयी नहीं रहे हैं।
जब कभी परिस्थितियाँ नियन्त्रण से बाहर हुईं और निराशा के बादल घने व काले होने लगे
तब उन्होंने आशा और मुक्ति का प्रकाश फैलाया
और
वह भी ऐसी प्रभुधारक विभूतियों द्वारा कि
जिन्होंने हमें परेशानियों और बाधाओं के भँवर से बाहर निकलने का मार्ग दर्शन दिया।
इन दिव्य स्वरूपों ने हमें जीवन का सच्चा अर्थ और उद्देश्य बताया।
ऐसी विभूतियों की सेरेछाया और मार्ग दर्शन से हमारे दिमाग को चैन और आत्मा को शांति मिली।
उन्होंने हमें पूजा के स्रोत बताए और स्पष्ट करा कि युद्धपोत शांति और स्वस्थता के सच्चे साधन नहीं हैं।

उनके शब्द आशिष थे, उनकी क्रियाएँ उपलब्धियाँ थीं और उनकी कृपा हमारे लिये पूर्णता थी।
क्या हम सच्चाई की इस राह पर नहीं चलेंगे?
क्या आप जीवन का सही उद्देश्य समझना चाहते हो?
क्या आप विभिन्न भयों से छूट कर मलिन विचारों के चंगुल से मुक्ति पाकर माधुर्य व एकलयता चाहते हो?
इस हेतु सर्वोत्तम और अत्यधिक आसान तरीका यह है कि सच्चे संत को शरणागत हो जायें।
केवल उनके अनुग्रह और मार्ग दर्शन से ही हम आध्यात्मिक राह की हर बाधा को सफलतापूर्वक लांघ सकते हैं।
प.पू. काकाजी एक अजोड़ आध्यात्मिक सद्गुरु थे–

– किसी भी प्रकार का बौद्धिक या भौतिक अधिकार जताए बिना, उन्होंने निरपेक्ष प्रेम, करुणा
  और
  निःस्वार्थ भक्ति के बल पर भक्तों के दिलों पर राज किया।
– पुरानी प्रथा और रुढ़ियों का अंधा अनुसरण ना करके
  उन्होंने सच्ची आध्यात्मिकता के सनातन मूल्यों का प्रचार और प्रसार किया।
– 'ना' करे बिना उन्होंने त्याग की प्रेरणा दी
  और
  'हाँ' करे बिना उन्होंने बिना कोई शर्त का समर्पण और भक्ति प्रगटाई।
– किसी को भी जकड़े बिना, उन्होंने हज़ारों का भक्तिभरा दिल जीता।
  ऐसा था उनके संबंध के जादू का असर !
– उन्होंने खुद को इतनी हद तक समर्पित किया कि किसी को और कहीं देखने की जरुरत नहीं रही।
– उन्होंने इतना प्रेम बांटा कि किसी ने अपने आपको वंचित नहीं महसूस किया।
– उन्होंने इतनी उमंग दी कि किसी ने स्वयं को कमज़ोर महसूस नहीं किया
  और

इतना आत्मविश्वास बख़्शा कि किसी ने अपने आप को भटका हुआ
या
असुरक्षित महसूस नहीं किया।

उन्होंने हर व्यक्ति को हर चीज़ दी, लेकिन प्रभु की मूर्ति अपने पास रखी
और
आध्यात्मिकता के शिखर पर पहुंचने के गूढ़ रहस्य सच्चे मुमुक्षु को बताये भी।
फिर भी उन्होंने कभी भी अपना आध्यात्मिक एकाधिकार या दावा ना रखा,
गुटबंदी को कभी बढ़ावा नहीं दिया।
उनके लिये सारी मानव जाति ही उनकी बिरादरी थी और सभी नर-नारी उनके रिश्तेदार थे।
उनके लिए सभी करीब के थे, पर भक्त सर्वाधिक प्रिय थे।
मानवदेह में वे एक मूर्त परम दिव्य तत्त्व थे।
फिर भी,
उन्होंने कभी भी वरिष्ठता के बाह्य या आंतरिक—देखे या अनदेखे अवरोध खड़े करके
अपने आप को जन समुदाय से पृथक नहीं किया।
तब भी उन्होंने साबित तो किया ही कि वे सबसे कुछ अलग ही हैं।
सर्वोत्तमों में बेहतर, लेकिन ना किसी की पहुँच से बाहर, ना ही बात कहने-सुनने के लिए अनुपलब्ध !
यह सिर्फ उनकी विनम्रता नहीं थी, बल्कि जीवनशैली थी।
उन्होंने अपना परम सुख, दिव्यानंद और परम तत्त्व की अनुभूति बांटने के लिए सभी को आमंत्रित किया।
इतना ही नहीं, इसी को उन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया—
अपने संबंध में आये हुए को अपने जैसा ही सुखी, आनंदमय और शक्तिशाली बनाने का !
उनके हृदय की उद्दात्तभावना मानव बुद्धि की समझ से बाहर थी।
आध्यात्मिक ऊँचाई के शिखर पर जो भी उनके नज़दीक पहुँचता दिखा,
उन्होंने कभी उसकी आकांक्षाओं का गला घोंटने में विश्वास नहीं रखा;
क्योंकि वे सहजानंद के असीमित विस्तार को जानते थे और उसी में रहते थे।
उनके मन आध्यात्मिक उन्नति सदैव असीमित, अमर्यादित
और
नाप या आँकड़ों के स्तर से नापी नहीं जा सकती थी।
अतः उनके लिये कोई चुनौती ना थी, सो उनके मन ना कोई विरोधी था।
कोई खतरा ना था, सो कोई भय नहीं था।
वे महज प्रभु का उपकरण बन कर जीए।
इनके लिए अपना अहंकार ना था; सो ना थी आत्मश्लाधा.....
'अहम' ना था, सो नहीं थी प्रतिक्रिया.....
प्रतिक्रिया ना थी, सो अपनी दिव्य भूमिका में सभी का स्वागत करने में कोई हिचकिचाहट नहीं थी.....
वे हमेशा वर्तमान में जीए; इसीलिए भविष्य का स्थान ना था—सो, चिन्ता ना थी।
उनके लिए सब कुछ दिव्य था—सो, कुछ गलत लगता नहीं था—सो, कोई पछतावा ना था।
दिव्यताभरी दृष्टि से उन्होंने सब को दिव्य जाना।
अपने करुणाभरे प्रेम से उन्होंने सब पर आशिष बरसाए
और
अपनी सर्वोपरि उदारता से उन्होंने हर किसी को चमकने का मौका दिया।
बौद्धिक मूल्यांकनों युक्त उनके कोई मापदंड ना थे;
क्योंकि वे जानते थे कि हर एक मुक्त—चाहे छोटा हो या बड़ा
वह उनके प्यारे प्रभु-गुरु का पसंदीदा बालक है
और
इसलिए उनके विचार, व्यवहार और वर्तावं उनके प्रभु की ही मर्जी और प्रकाश के प्रतिबिम्ब हैं।
सो, ईर्ष्या या असुरक्षित महसूस होने का कारण होने के बजाय

उनके लिए वह आनंद और अभिमान का विषय था।
आध्यात्मिकता में वे एक नई राह के अन्वेषक थे,
मील का एक पत्थर ! एक क्रांतिकारी थे !
फिर भी वे अपने निर्णयों और राय में लचीले थे।
वे अपने मत में बहुत स्पष्ट एवं निर्णय में मर्मभेदी थे,
पर उनकी कुशाग्र बुद्धि और सरल व्यवहार
आम से आम मुक्त के लिए भी कभी बाधारूप नहीं बना।
उनसे कोई दूरी नहीं बना सका। वे बड़ी सूक्ष्मता से चमत्कार करते थे।
उनके लिए पारदर्शी स्वच्छता की अपेक्षा पवित्रता ज्यादा मूल्यवान थी।
ताकत से अधिक महत्वपूर्ण थी साहस के लिए हिम्मत !
ऊँचाई उन्हें ज्यादा महत्वपूर्ण थी ना कि लंबाई या चौड़ाई !
आँकड़ों की अपेक्षा गुणवत्ता उनका मापदंड था।
सो उन्होंने अपने शिष्यों को ऐसे दिव्य गुणों में ढाला।
वे चाहते थे कि शिष्य उनके साथ चलें, ना कि उनके पीछे घिसटते रहें।
उन्होंने उनको चरित्र में बलवान, अपनी बात रखने में निडर, सफलता में विनम्र
और
असफलताओं में निराश ना होकर झूझना सिखाया।
उन्होंने उन्हें हर एक क्रिया से पहले प्रभु और गुरु का स्मरण करना
और
हर काम के बाद उसी का धन्यवाद करना सिखाया।
वे उपचार की बजाय रोकथाम में विश्वास रखते थे
और
इसलिए उन्होंने भगवान स्वामिनारायण के अखंड धारकों का नवकार मंत्र, भजन
और
अग्रिम प्रायश्चितरूपी प्रार्थना का सहारा लेने सुरक्षा कवच दिखाया;
बजाय इसके कि गल्ती हो जाने के बाद सहायता के लिए दौड़ना।
उन्होंने 'स्वामिनारायण' मंत्र सिद्ध करने की कला का अभ्यास किया और सिखाया,
जिसके जादूभरे प्रभाव ने शारीरिक बीमारियों और मानसिक तनाव से बचाया है;
मुक्ति दी है और शाश्वत् शांति व मोक्ष प्रदान किया है।
उन्होंने उसका इतना अभ्यास और सिद्धि कर ली कि–
वे खुद उस मंत्र के और उसके स्वामी–सर्वोपरि प्रभु के जीवंत मूर्त स्वरूप बन गए।
हर क्रिया में उनकी शैली का एक सार था कि समस्या की जड़ तक पहुँचो, चट्टान की सर्वोच्च चोटी पर पहुँचो।
उनके लिए भय या असफलता केवल मानसिक प्रलाप थे,
जिनकी उनके शक्तिशाली आध्यात्मिक घेरे में कोई जगह ना थी।
वे समय के साथ रहे, फिर भी उनकी सोच कहीं आगे की थी !
उनका धर्म और आध्यात्मिकता की ओर रवैया दिखावे की रुढ़ियों और जड़ रिवाजों के बजाय
आज की जरूरतों, भावि की चुनौतियों के अनुरूप अधिक था।
हालाँकि उन्होंने सूदूर भविष्य के लिए इशारा दिया; पर उन्होंने वर्तमान से रिश्ता नहीं तोड़ा।
चूंकि वैसे वे सामान्य शिष्टाचार से परे और अनौपचारिक थे,
फिर भी उन्होंने प्रभु और उनके संतों द्वारा स्थापित मर्यादाओं–नियमों का उल्लंघन कभी नहीं किया।
वे एक ऐसे आदर्श शिष्य थे कि उन्होंने पलभर भी अपने गुरुओं–
गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज और गुरुहरि योगी महाराज को विस्मृत नहीं किया।

वे ऐसे आदर्श साथी थे कि ना तो अपने सहयोगियों के समर्थन व सहयोग की सराहना करना कभी भूले
और
ना ही जरूरत ना होने पर या अन्य नए सहयोगियों के मिल जाने पर उन्हें उपेक्षित या नज़रअंदाज़ किया।
वे ऐसे आदर्श गुरु थे कि उन्होंने अपने और शिष्यों के बीच
'सुरक्षित दूरी की तनिक भी–ज़रा-सी भी दीवार' नहीं बनाई।
जो भी उनकी शरण में आया, उसमें उन्होंने आत्मविश्वास जगाया और उसे सुरक्षा प्रदान की।
उन्होंने ना तो उन्हें सफलता में पुचकारा; ना ही असफलता में दुत्कारा।
वे दृढ़ विश्वासी और दृढ़ निश्चयी–एक विवेकी पुरुष और दिव्य दृष्टि के एक जादूगर थे।
उनकी बात में ठोस वज़न था–प्रभु के संबंध की मस्ती थी;
पर दुर्भाग्य से कई बार इसे उनके छीछरे गर्व और आत्मश्लाधा के रूप में समझा गया।
उनकी सलाह और सावधानी के शब्दों को असंभावित वार्ता
और
बे-तुके डर से काल्पनिक संघर्ष के रूप में नकार दिया गया !
कई बार हमारा उनके प्रति बर्ताव अपमान भरा और धृष्टतापूर्ण था,
फिर भी उन्होंने अपनी खानदानी से हमें हमेशा आनंदभरी क्षमा देकर माफ किया–
जो कहना बहुत आसान है, लेकिन करना अत्यधिक कठिन।
उन्होंने हमारी क्षतियों का ज़हर पीकर सदैव दिव्यामृत बरसाया।
जान बूझ कर करी गई हमारी उपेक्षा को उन्होंने सहा;
इतना ही नहीं–हर प्रसंग को उन्होंने एकतरफे प्रेम
और
अमाप सहनशक्ति के चिरपरिचित अंदाज में लिया।
– ऐसा उन्होंने हमारे प्रति के प्यार की वज़ह से किया।
– ऐसा उन्होंने व्यग्र हुए बिना, ढिंढोरा पीटे बिना–बिना दिखावे के किया।
– ऐसा उन्होंने प्रभु की भक्ति के कारण किया।
– ऐसा उन्होंने एकसुरता के सुर छेड़ने के लिए किया।
उन्होंने हमें प्यार से जीता; ना कि शस्त्र या तलवार से या तर्क से या जायज़ दिखा कर !
हम चैन से सोये, सो वे हमेशा जागृत रहे।
वे हमेशा जल्दी में रहते ताकि हमें देर न हो जाये।
कई बार उन्होंने हमें डाँटा और नाराज़गी जताई; पर वह गुस्सा नहीं, वरन् हमारे प्रति की उनकी फ़िकर थी–
चुनौतियों का सामना करने का उनका प्रशिक्षण था।
हमें कष्ट और पीड़ा से बचाने का उनका यह तरीका था।
मानसिक बीमारी से सुरक्षित रखने की उनकी ये दवाई थी–क्योंकि वे एक पूर्णतावादी थे।
इरादों की पवित्रता और कार्यों की नेकी में वे तनिक भी समझौता नहीं करते थे।
कई बार हमने उनके मूलभूत उद्देश्य को ना समझ कर मूर्खता से उनकी क्रियाओं की नापातोली की,
पर फिर भी उन्होंने अपना लक्ष्य पाने में कोई कसर ना छोड़ी या लापरवाही ना बरती।
किसी वस्तु का अभाव से त्याग कराने की बजाय;
उससे वह ऊब जाए इतना अधिक देकर त्याग कराने में उनका विश्वास था।
वे मानते थे कि सच्ची हिम्मत क्षमा करने में है
और
सच्चा सुख देने में है।
उनके हिसाब से जीवन एक पहेली नहीं जिसे सुलझाया जाए, बल्कि प्रभु की एक दिव्य लीला है
जिसका आनंद किनारे पर बैठ कर देखते रहने से नहीं, वरन् अपना पात्र अदा करके लेना चाहिए।

उनका जीवन एक खुली किताब थी, जिसमें कोई रहस्य नहीं छुपा हुआ था, ना कोई गुप्त भेद था।
बहते झरने के स्वच्छ जल-सा पारदर्शी जीवन था उनका।
अपने खुले स्वभाव के कारण उन्होंने अकसर अपनी दिव्य अनुभूति के रहस्यों को बताया।
पर, हमारी संकुचित दृष्टि और छिछली बुद्धि के कारण उनके इस खुलेपन को हमने उनका छिछलापन मान लिया।
उन्होंने गिरगिट की भाँति कभी रंग नहीं बदला
या
हवा के रुख के हिसाब से मुँह नहीं मोड़ा।
लेकिन वे हमेशा एक-से ही रहे, वही-जो वे थे,
पराभक्ति के स्रोत व दिव्यानन्द से भरपूर !
जो कसर हमने उनमें देखी वह हमारी संकुचित दृष्टि और गलत विचारों का परिणाम था।
कई बार उनकी चुप्पी-खामोशी का गलत अर्थ लगा कर हमने उनकी 'हाँ' मान ली।
उनके धैर्य को कमज़ोरी समझ ली।
उनकी सादगी-सरलता को आध्यात्मिक दरिद्रता समझी।
शिष्यों की संख्या-अपने पीछे भीड़ जुटाने की व चमत्कारों की क्षमता के आधार पर उन्हें आंका गया।
ऐसी नीची दृष्टि रखने के कारण कई बार हमारी बुद्धि को वे कुछ कम नज़र आये।
पर उनका सही आंकलन बुद्धि का विषय नहीं था।
उनका स्वरूप पहचानने के लिए अनुग्रह और प्रार्थना की जरूरत थी।
बाल सुलभ निर्दोषता व तीव्र अभीप्सा की आवश्यकता थी।
क्योंकि वे सर्वोच्च दिव्य तत्त्व–प्रभु का साकार मानव स्वरूप थे।
एक सामान्य मानव के रूप में वे एक आध्यात्मिक युगपुरुष थे–
समय की शिला पर नश्वर, किन्तु भक्तों के दिलों में अनश्वर !
जगत में उनके नाम से प्रसिद्धि पाये
और
अपने दिव्य स्वरूप से सब के प्यारे, सम्मानित, प्रतिष्ठित बनकर पूजे गए।

लोग अपनी समस्याओं से दो तरीके से छुटकारा पाते हैं।
एक तो वे कोई आसान बचाव का रास्ता ढूंढकर उससे मुंह फेर कर भाग जाते हैं
या
कोई बहादुर व्यक्ति बिना किसी नतीजे की परवाह किये उसका सामना करके उन्हें जीत कर निश्चित सफलता पाता है।
प.पू. काकाजी दूसरी श्रेणी के थे।
उनके लिए हर दिक्कत ऊपर उठने का मौका था।
हर चुनौती आध्यात्मिक उत्थान की ओर बढ़ने का एक सोपान थी।
स्वरूपज्ञान के जरिये व अपने अनूठे परिश्रम और भक्ति से,
उन्होंने एक नए क्रान्तिकारी और अद्वितीय रास्ते का निर्माण किया।
एक ऐसा रास्ता जिस पर आने वाली पीढ़ीयाँ आसानी से अग्रसर हो सकें।
उनके लिए आध्यात्मिकता या साधुता महज़ एक मंजिल ना थी,
एक खजाना नहीं था जुटाने के लिए, ना ही ताज था दिखाने को
या
एक मैडल था प्रदर्शन के लिए।
यह उनके जीवन का श्वास था।
आध्यात्मिकता के शिखर पर आसीन होने के बावजूद वे अति विनम्र, सरल व दीन रहे।
उनके मन सच्ची आध्यात्मिकता, वैभव, शो-शा और आडंबर से मुक्त थी।
उनको तो सादगी–हृदय की सरलता, दीनता और विनम्रता से ही मतलब था।

भौतिक वैभव या कीर्ति की अपेक्षा दिव्य गुणों और साधुता से
वे हमारी आत्मा की समृद्धि के लिए तरसते थे।
सभी मुक्तों में आंतरिक सुहृदभाव उनकी सबसे अधिक संजोयी योजना थी
और
सभी सद्गुरुओं में आध्यात्मिक ऐक्य उनके जीवन का अभिप्राय था।
व्यक्तिगत निजी शान-शौकत की बजाय सब की शान-शौकत में वे यकीन करते थे।
उन्होंने समग्र बृहद् गुणातीत समाज को अपना ही माना था......
सो, **उन्होंने किसी भी स्थान, केन्द्र, ग्रुप, युनिट में अपने लिये-अपना एक अलग प्लेटफार्म बनाने की— कोर्नरींग करने की कभी चेष्टा नहीं करी।**
बल्कि जो भी केन्द्र में जाते, वे वहाँ की—वहीं के संतों की—अधिष्ठाता की ही महिमा गाकर पुष्टि करते।
यह था उनकी इस समग्र गुणातीत समाज के प्रति की भावात्मक एकता
और
यह था उनके मन की विशालता और हृदय की उदारता का दर्शन !

क्या हम विश्वास कर सकते हैं कि—
धरातल पर ऐसी दिव्य विभूति मानवरूप में अवतरित हुई?
उनसे हमारा संबंध हमारे जीवन काल की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना है,
पर क्या हम उसका सर्वाधिक लाभ उठा पाये?
शायद हमारी दृष्टि शक और शंकाओं से भ्रमित हो गई थी।
पूर्वग्रहों के कारण हमारे विचार संकुचित हो गये थे।
निजी स्वार्थ के रेगिस्तान ने हमारे प्रेम और पूजा के स्रोत को सुखा दिया था।
फिर भी उन्होंने हमारी कमियों को नज़रअंदाज़ किया
और
अनुग्रह करके अपने संबंध द्वारा मोक्ष की प्रतीति कराई।
पर, अब हमारा लक्ष्य क्या है?
यूं तो उनके अनगिनत ऋण हम कभी चुका ना पाएंगे;
पर हम विनम्रता द्वारा उनके नाम को उज्ज्वल करें।
हम में रखे उनके विश्वास को झूठ ना साबित होने दें।

इसलिए हम भूलें नहीं कि—
प.पू. काकाजी ने लिविंग हाईरारकी—जीवंत परंपरा की हमेशा बात करी।
उनसे हमने अकसर सुना है—
'धीस पावरहाऊस इज़ कॉन्स्टन्ट एन्ड कन्टीन्युअस'
यानि—तत्त्व से महाराज को अखंड रखी हुई विभूतियाँ सर्वदा और निरंतर धरती पर हैं व रहेंगी।
यूं श्रीजी महाराज के वरदान—
'मानवरूप में मैं मेरी विभूतियों द्वारा धरातल पर अखंड रहूंगा'
इसी का ही प्रतिपादन किया।
और...... इसी बात पर ज़ोर देते रहे कि—
प्रगट की निष्ठा होनी अनिवार्य है।
स्वयं ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज से अनन्यभाव से जुड़े हुए थे;
पर स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज के अंतर्धान होने पर
'अब जो हैं वह ये—प.पू. योगीजी महाराज हैं; उनका सेवन करो, वे कहें वह करो—
यही ज्ञान है और इनकी प्राप्ति वही मोक्ष है...

आज नहीं तो कल, पर आखिर यह करना ही पड़ेगा !'
यूं कह-कह कर तत्त्व से वे गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा प्रगट ही हैं–
इस परम सत्य का उद्घोष किया करा
और.....
अब अनुग्रह करके ऐसे स्वरूपों–
प.पू. पप्पाजी, प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी, प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी, प.पू. साहेब, प.पू. दिनकरभाई वगैरह की
हमें खुद पहचान भी करा कर गये।
सो यदि हम काकाजी को मानते हैं
और
स्थूल रूप से काकाजी के ना होने पर
'हमें तो अब किसी प्रगट स्वरूप के साथ जुड़ने की जरूरत नहीं'
या
'मैं काकाजी को तो मानता हूँ,
पर तत्त्व से प्रभु अन्य और जिन स्वरूपों द्वारा प्रकट रह कर कार्य कर रहे हैं;
उन्हें मैं नहीं मान पाता–काकाजी तो काकाजी थे।'
यूं पकड़े रखने में हम गल्ती ही खा जायेंगे।
हम पूर्ण आध्यात्मिक विकास को नहीं पा सकेंगे
दूसरी ओर–
इसका अर्थ यह भी हुआ कि हमने काकाजी को ही सम्पूर्ण स्वीकारा नहीं !
जैसे कोई यदि कहता है कि मैं श्रीकृष्ण को तो मानता हूँ; पर गीता में मेरा विश्वास नहीं है
ऐसी ही बेहुदी बात है यह।
पर, यह बात भी पक्की है कि–
ऐसे प्रकट स्वरूप को हम काकाजी का ही रूप मान कर निहारने लगेंगे–
या
उसके लिए सीधे प.पू. काकाजी को पुकार करेंगे
तो, अर्चिमार्ग से वह पुकार उन्हें सीधी पहुँचेगी
और
हमें उनके प्राकट्य की प्रतीति करा देंगे !
सो जिन्होंने प.पू. काकाजी को देखे नहीं हों,
उनका सम्पर्क ही ना हुआ हो,
प.पू. काकाजी स्थूल रूप से जब थे–तब उनसे ऐसा दिव्य ऐक्य ना साध पाए हों
वे आज इन प्रभुधारक प्रगट विभूतियों में से किसी भी
एक से अंतर व अंतराय रहित का संबंध करके
सभी अन्य स्वरूपों में अखंड निर्दोषभाव, दिव्यभाव दृढ़ करके वही प्राप्ति कर सकते हैं
और
अक्षरधाम का सुख भी यहीं-जीतेजी अनुभव कर सकते हैं–प्राप्त कर सकते हैं

तो, आओ ! हम प्रार्थना करें
और
आध्यात्मिकता का सच्चा अर्थ जो उन्होंने हमें बताया,
उसे समझने की सुरुचि करके
उनके ऐसे सच्चे शिष्य बने कि वे हम पर गर्व कर सकें।

हम सभी के लिए अत्यधिक आनन्द की बात है कि–
ऐसी दिव्यविभूति प.पू. काकाजी का 81वाँ प्राकट्य दिन
'दिव्य एकता महोत्सव' के रूप में 12, 13, 14 जून '98 के मंगलकारी दिनों में–
सभी प्रत्यक्ष गुणातीत स्वरूपों और मुक्तों के सान्निध्य में
शिकागो में मनाया जा रहा है........
उन्हें अभी भी तत्त्व से अखंड हाजराहजुर मान कर
एक दृढ़ संकल्प, प्रार्थना करने का यह अद्‌भुत मौका है।
तो आईये, हम सब मिल कर उनकी हमारे लिए की गई
कुर्बानी और परिश्रम को याद करें......
अपने आपको उनके श्रीचरणों में समर्पित कर दें.....
हम सब शपथ लें कि–
हम आपके लक्ष्यों को अपनी दृष्टि से ओझल नहीं होने दें,
आपकी दिखाई राह पर, आपकी एक मात्र प्रसन्नता के लिए ही जीने का निशान रखें।
हम वृत्तियों, वैभव, ऐश्वर्य या कीर्ति की लालच के शिकार नहीं हों.....
हम अपने खून की आखिरी बूंद तक सदा कोशिश करें कि आपके अभिप्राय में शामिल हों
और
आपके नाम का परिचय बन सकें.....

('अक्षरधाम' पत्रिका में आए लेख पर आधारित)

✡✡✡✡✡

दर्दे उलफ़त..........

[गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा रखे गए निशान को हम चूक ना जायें, उसके लिए प.पू. काकाजी हमेशा निरन्तर हमें झकझोरते; क्योंकि गुरुहरि योगीजी महाराज की योजना का उन्हें खूब स्पष्ट व सम्यक् दर्शन था। 22.9.'68 (ब्रह्मप्रवाह–पृष्ठ 41) के लिखे पत्र की निम्न पंक्तियों द्वारा यह पता चलता है–
'.... पू. बापा ने राजी होकर जिस कारण दूर रखा है, उसका अर्थ समझ कर वह लक्ष्य पूरा कर ही लेना........
सभी अलौकिक भूमिका को चूर-चूर कर देने बापा ने हमें दूर किया है...'
दूसरी ओर–
23.5.'75 (ब्रह्मप्रवाह– पृष्ठ 152) के लिखे एक पत्र में उन्होंने फिर लिखा कि–
'.... लेकिन कोई प्लेटफॉर्म अब तक तैयार हुआ नहीं।
सो अन्तर में दर्द होता है कि–
हमने प.पू. बापा की जैसी चाहिए, वैसी शोभा बढ़ाई नहीं।'
और
1984 तक जब उन्होंने हमें उस निशान से चूकते हुए देखा, तब आखिर 1984 आणंद में प्रगट ब्रह्मस्वरूप प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की सुवर्ण जयंती के अवसर पर तो उनके भीतर का दर्द निम्न अंग्रेजी शब्दों में उभर आया और....... दो साल सब्र रख कर 1986 में उन्होंने हमें चोट पहुंचाने हमसे मुंह भी फेर लिया !
उनकी इस बात पर अब गौर करें और प.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी जैसी विभूतियों की सेरेछाया में उस दिशा में कदम बढ़ाने बिना कोई देरी करे हम लग पड़ें।]

'I am so extremely sorry to tell you,
rather with deep morose, with dejected heart
that the whole golden jubilee celebration —
instead of in a spiritual manner,
is like a election campaign.
We should have some sort of creative inspiration here,
rather than that it's not like a platform for election campaign.
So I am praying Almighty God & Supramental Power —
Lord Swaminarayan – Yogi Maharaj
to curse the leaders – Pappaji & Kakaji —
to curse us so miserably
that we have miserably failed in our plan to fulfil your obligation.
What is that obligation —
that obligation on this Golden Jubilee of Hariprasadswamiji?
When Bapa initiated 51 saints —
only two – and only two – Kothariswami and Premswami —
whom we can place in the international market of saints and
in this Yuvak convention that quantity should have been increased.
So Oh ! Yogiji Maharaj,
we have – the leaders – the sadgurus – we have been,
we have miserably failed in our attempt,
and for that instead of praying,

you curse us – curse us so much that
in the celebration of the Gunatit Shatabdi —
the Aksharpurushottam Sampradaya and philosophy
and
sampradaya also, has also miserably failed.......
after 25 years.
What is your achievement and attainment?
What is your celebration of Aksharpurushottam philosophy?
What legacy Shastri Maharaj and Yogiji Maharaj gave us?
What are we boasting?
This is the result after 25 years?
Shall we little bit interospect – What has happened?
Instead of criticizing others,
Oh ! Yogiji Maharaj, Oh ! Lord Swaminarayan —
on this most auspicious occassion of the Golden celebration of Hariprasadswamiji
you curse us so miserably to us – to Pappaji and Kakaji —
that we may not commit the same mistake
before the celebration comes to us of Gunatit Dwishatabdi
and
more saints like Kothari and Premswami may come forth —
may come forth
out of ten thousand youths which were prepared —
initiated by Naradjee – some saint said.
And what is that knowledge?
In a moment, when Naradji saw the hand of Ambrisha's daughter,
in a moment the whole knowledge had gone?
What will you do of that knowledge?
In this Atomic age —
in this cosmic missiles and other bombs —
what knowledge will come?
In what fear we are working?
And these two saints — Shastriswami and Yagnavallabh
and
others are getting training;
so let these new saints also have that vision–that divine vision.
Whether ten thousand youths or millions of youths —
if they would not have that sort of vision,
if they would not have developed that sort of creative attitude,
the whole – the whole Aksharpurushottam philosophy
has miserably failed.
May God bless us, May God bless us —
No —
May God curse us – terribly – terribly
to awaken ourself from the begining,
so that we can shoulder our responsibilities.
God bless us – bless you people,
so that you have participated so strong
and
give enough strength to Hariprasadswamiji
so that he can lead all others on the same path –
Thank you !'

– H.D. KAKAJI MAHARAJ

(on the auspicious occassion of golden jubilee celebration of P.P. Hariprasadswamiji)

व्रतोत्सवसूची

(1)	दि. 1.6.98	सोमवार	–	प.पू. पप्पाजी का दृष्टा दिन, गुणातीत ज्योत स्थापना दिन
(2)	दि. 4.6.98	गुरुवार	–	भगवान स्वामिनारायण का स्वधामगमन दिन
(3)	दि. 5.6.98	शुक्रवार	–	भीम एकादशी, व्रत
(4)	दि.12.6.98	शुक्रवार	–	ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज का प्राकट्य दिन जो कि 14 जून '98 रविवार को सायं 6.30 से 9.00 'अनिर्देश'–दिल्ली में स्थानिक रूप से मनाया जाएगा।
(5)	दि.20.6.98	शनिवार	–	योगिनी एकादशी, व्रत

Air Mail
'**Bhagwatkripa**' Monthly Magazine
Despatched on 25/26 of every month
If undelivered please return to :—
Owner, Publisher, Editor :—
SHRI PRABHAKAR RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY-DELHI
Anirdesh, Kakaji Lane, Swaminarayan Marg,
Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Type Setting : **SHAYOKA Type Setting** B-351, Sect.-I, Rohini, Delhi-85
Printed at : **Bharat Pakaging and Allied Industries**
C-2/12, Mayapuri Industrial Area, Phase-II, New Delhi-110 064
Tel.: 5401210, 5402393

TO,